अनेकान्त और स्याद्वाद

डॉ० चेतन प्रकाश पाटनी
(जोधपुर)

(प्रबुद्ध लेखक : विश्वविद्यालय प्राध्यापक)

वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी जिनेन्द्रदेव ने वस्तु-स्वरूप को जानने के लिए लोक को एक मौलिक दिव्य पद्धति प्रदान की है। वस्तु का सर्वांगीण स्वरूप इसी पद्धति से जाना जा सकता है। विचार अनेक हैं, वे बहुत बार परस्पर विरुद्ध प्रतीत होते हैं परन्तु जिनेन्द्र-निर्दिष्ट पद्धति से परस्पर का यह विरोध समाप्त हो जाता है। यह पद्धति है—विचारों में अनेकान्त और वाणी में स्याद्वाद का अवलम्बन।

अनेकान्त—इस संधिपद में दो शब्द हैं—अनेक+अन्त। अन्त का अर्थ है—**'अन्तः स्वरूपे, निकटे, प्रान्ते, निश्चयनाशयोः अवयवेऽपि' इति हैम**। अन्त शब्द स्वरूप में, निकट में, प्रान्त में, निश्चय में, नाश में, मरण में, अवयव में नाना अर्थों में आता है। अनेकान्त में अन्त का अर्थ स्वरूप, स्वभाव अथवा धर्म है।

'अनेके अन्ताः धर्माः सामान्यविशेषपर्यायगुणाः यस्येति सिद्धोऽनेकान्तः।' जिसमें अनेक अन्त अर्थात् धर्म—सामान्य विशेष गुण और पर्याय पाये जाते हैं, उसे अनेकान्त कहते हैं। यानी सामान्यादि अनेक धर्म वाले पदार्थ को अनेकान्त कहते हैं।

परस्पर विरोधी विचारों में अवरोध का आधार, वस्तु का अनेक धर्मात्मक होना है। हम जिस स्वरूप में वस्तु को देख रहे हैं, वस्तु का स्वरूप उतना ही नहीं है। हमारी दृष्टि सीमित है। जबकि वस्तु का स्वरूप असीम। प्रत्येक वस्तु विराट् है और अनन्तानन्त अंशों, धर्मों, गुणों और शक्तियों का पिण्ड है। ये अनन्त अंश उसमें सत् रूप से विद्यमान हैं। ये वस्तु के सह-भावी धर्म कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक वस्तु द्रव्यशक्ति से नित्य होने पर भी पर्यायशक्ति से क्षण-क्षण में परिवर्तनशील है, यह परिवर्तन अर्थात् पर्याय एक दो नहीं, सहस्र और लक्ष भी नहीं, अनन्त हैं और वे भी वस्तु के ही अभिन्न अंश हैं। ये अंश क्रमभाविधर्म कहलाते हैं। इस प्रकार अनन्त सहभावी और अनन्त क्रमभाविपर्यायों का समूह ही एक वस्तु है।

किन्तु वस्तु का स्वरूप इतने में ही परिपूर्ण नहीं होता क्योंकि विधेयात्मक पर्यायों की अपेक्षा भी अनन्तगुणा निषेधात्मक गुण और पर्याय का नास्तित्व भी उसी वस्तु में है। जैसे—गाय। इस शब्द का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चारण करने से गाय के अस्तित्व का तथा गाय से भिन्न समस्त पदार्थों के नास्तित्व का ज्ञान होता है अर्थात् गाय अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा है और भैंस, हरिण आदि पर-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ अस्ति-नास्ति दोनों रूप है।

'गाय' का पूर्ण स्वरूप समझने हेतु उसके सद्भाव (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि स्थूल इन्द्रियों से प्रतीत होने वाले गुण तथा इन्द्रियों से नहीं प्रतीत होने वाले सूक्ष्म अनन्त गुण) तथा असद्भाव रूप (भैंस आदि अभाव रूप गुण) अनन्त धर्मों को जानना परमावश्यक है क्योंकि अनन्त धर्मों के ज्ञान बिना वस्तु का स्वरूप पूर्ण रूप से जाना नहीं जा सकता। वस्तु के अस्ति-नास्ति आदि गुण परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं परन्तु अनेकान्तवाद/दर्शन/सिद्धान्त उन सबके विरोध को दूर कर देता है। जैसे—एक मनुष्य किसी का पिता, किसी का पुत्र, किसी का भाई, किसी का पति, श्वसुर, देवर, जेठ, मामा, दादा, पोता आदि अनेक नामधारी है तथा ये सम्बन्ध परस्पर विरोधी भी प्रतीत होते हैं कि जो पिता है वह पुत्र/पौत्र कैसे हो सकता है परन्तु अपेक्षाभेद उस विरोध का शमन कर देता है। इसी प्रकार अनेकान्त नित्य, अनित्य, एकत्व, अनेकत्य आदि विरोधी धर्मों का परिहार करता है। जिस प्रकार एक पुरुष में परस्पर विरुद्ध से प्रतीत होने वाले पितृत्व/पुत्रत्व और पौत्रत्व आदि धर्म विविध अपेक्षाओं से सुसंगत होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक पदार्थ में सत्ता, असत्ता, नित्यता, अनित्यता, एकता, अनेकता आदि धर्म भी विभिन्न नय-विवक्षा से सुसंगत हो जाते हैं। यथा—द्रव्यार्थिक नय की मुख्यता और पर्यायार्थिक नय की गौणता से द्रव्य नित्य है तथा द्रव्यार्थिक नय की गौणता और पर्यायार्थिक नय की मुख्यता से समस्त पदार्थ अनित्य हैं तथा महासत्ता की अपेक्षा समस्त पदार्थ एक हैं।

'सद्द्रव्यलक्षणम्' द्रव्य का लक्षण सत् है, इसकी अपेक्षा जीवादि समस्त पदार्थ एक हैं तथा महा-सत्ता की अपेक्षा वर्णन किया जाये तो एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ का सत्त्व न होने से असत् भी हैं। ऐसा कौन होगा जो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने वाले पदार्थों के नानापने को स्वीकार नहीं करेगा।

आम का फल अपने जीवनकाल में अनेक रूप पलटता रहता है। कभी कच्चा, कभी पक्का, कभी हरा, कभी पीला, कभी खट्टा, कभी मीठा, कभी कठोर, कभी नरम आदि, ये सब आम की स्थूल अवस्थाएँ हैं। एक अवस्था नष्ट होकर दूसरी की उत्पत्ति में दीर्घकाल की अपेक्षा होती है परन्तु क्या वह आम उस दीर्घ अवधि में ज्यों का त्यों बना रहता है तथा अचानक किसी क्षण हरे से पीला, और खट्टे से मीठा बन जाता है। नहीं, आम प्रतिक्षण अपनी अवस्थाएँ परिवर्तित करता रहता है परन्तु वे क्षण-क्षण में होने वाली अवस्थाएँ इतने सूक्ष्म अन्तर को लिए हुए होती हैं कि हमारी बुद्धि में नहीं आती, जब यह अन्तर स्थूल हो जाता है तब ही वह बुद्धिग्राह्य बनता है। इस प्रकार असंख्य क्षणों में असंख्य अवस्थाओं को धारण करने वाला आम आखिर तक आम ही बना रहता है, उसी प्रकार पदार्थों की मूल सत्ता एक होने पर भी अनेक रूप धारण करती है। पदार्थ का मूल रूप द्रव्य है और प्रति समय पलटने वाली उसकी अवस्थाएँ पर्याय हैं इसलिए पदार्थ द्रव्य की अपेक्षा नित्य है और पर्याय की अपेक्षा अनित्य।

द्रव्य परस्पर विरुद्ध अनन्त धर्मों का समन्वित पिण्ड है, चाहे अचेतन द्रव्य हो, चाहे चेतन द्रव्य हो, सूक्ष्म हो या स्थूल हो, मूर्तिक हो या अमूर्तिक हो, उसमें विरोधी धर्मों का अद्भुत सामंजस्य है। इसी सामंजस्य पर पदार्थ का अस्तित्व स्थिर है अतः वस्तु के किसी एक धर्म को स्वीकार कर दूसरे धर्म का परित्याग करके उसके वास्तविक स्वरूप को आँकने का प्रयत्न करना हास्यापद है तथा अपूर्णता में पूर्णता मानकर सन्तोष कर लेना प्रवंचना मात्र है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्याद्वाद—नयों के द्वारा अनेक धर्मात्मक वस्तु की सिद्धि करना ही स्याद्वाद है। नय वचनाधीन हैं और वचनों में वस्तु के स्वरूप का युगपत् वर्णन करने की क्षमता नहीं है। क्रम से वस्तु का वर्णन करना स्याद्वाद है।

'स्याद्वाद' शब्द स्यात् और वाद इन दो शब्दों के योग से बना है। 'स्यात्' शब्द अव्यय है। इसका अभिप्राय है कथञ्चित् अर्थात् किसी धर्म की अपेक्षा से, किसी दृष्टिकोण विशेष से। 'वाद' शब्द का अर्थ है—कथन करना। अर्थात् किसी धर्म की अपेक्षा से किसी वस्तु का वर्णन करना स्याद्वाद कहलाता है। कोई-कोई 'स्याद्' शब्द का अर्थ शायद अर्थात् भ्रम, अनिश्चय, सन्देह करते हैं अतः स्याद्वाद को संशयवाद कहते हैं परन्तु यह उनका भ्रम है। स्याद्वाद से वाच्य जो वस्तु है, वह निश्चित है, उसमें भ्रम या सन्देह की कोई सम्भावना नहीं।

'अनेकान्तात्मकार्थकथनं स्याद्वादः' (लघीयस्त्रय)। अनेक धर्मों वाली वस्तु में प्रयोजनादि गुणों का कथन करना स्याद्वाद है। विवक्षा, नय अथवा दृष्टिभेद से एक वस्तु में अनेक विरुद्ध धर्मों का कथन करना स्याद्वाद है।

तत्त्वार्थसूत्र अध्याय पाँच सूत्र बत्तीस **'अर्पितानर्पितसिद्धेः'** से नित्य, अनित्य, एकत्व, अनेकत्व, सामान्य, विशेष, सत्, असत्, मूर्तत्व, अमूर्तत्व, हेयत्व, उपादेयत्व आदि अनेक धर्मों की सिद्धि होती है।

स्याद्वादः सर्वथैकान्त-त्यागात् किंवृत्तधिद्विधिः।
सप्तभंगनयापेक्षो, हेयादेयविशेषकः॥

सर्वथा एकान्तवाद का त्यागकर, कथंचित् विधि से अनेक धर्मात्मक वस्तु का कथन करना स्याद्वाद है। स्याद्वाद के अभाव में वस्तु की सिद्धि नहीं हो पाती है। वस्तु के अनेक धर्मों का वर्णन सप्त भंगनय की अपेक्षा किया जाता है। स्याद्वाद वस्तु के सर्वांगीण स्वरूप को समझने की एक सापेक्ष भाषा पद्धति है।

जब प्रत्येक पदार्थ में अनन्त धर्म विद्यमान हैं और उन समस्त धर्मों का अभिन्न समुदाय ही वस्तु है तब उसे व्यक्त करने के लिए भाषा की भी आवश्यकता होती है। जब हम वस्तु को नित्य कहते हैं तो हमें किसी ऐसे शब्द का प्रयोग करना चाहिए जिससे उसमें रहने वाली अनित्यता का निषेध न हो जाये। इसी प्रकार जब वस्तु को अनित्य कहते हैं तब भी ऐसे शब्द का प्रयोग करना चाहिए जिससे नित्यता का विरोध न हो जाये। इसी प्रकार अन्य धर्मों – सत्ता, असत्ता, एकत्व—अनेकत्व आदि का कथन करते समय भी समझ लेना चाहिए। स्यात् शब्द का प्रयोग सब विरोधों को दूर करने वाला है।

'कथञ्चित्' अर्थ में प्रयुक्त हुआ 'स्यात्' शब्द एक सुनिश्चित दृष्टिकोण का सूचक है, इसमें सन्देह, संशय, भ्रम या अनिश्चय की कोई सम्भावना नहीं। यह स्याद्वाद सभी संघर्षों को दूर करने का एक अमोघ शस्त्र है। विचारों की भिन्नता ही मतभेद या विद्वेष की उद्भाविका है। इस पारस्परिक मतभेद में एक दूसरे के विचार और दृष्टि का समादर करते हुए एकरूपता लाना स्याद्वाद की मूल भूमिका है। मतभेद होना स्वाभाविक है परन्तु कदाग्रह छोड़कर सहृदयतापूर्वक समन्वय की आधारशिला पर विचार-विनिमय करना यही स्याद्वाद का मूल तत्व है।

जैनधर्म में अहिंसातत्व जितना रम्य है उतना ही रमणीक जैनदर्शन में स्याद्वाद सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के बिना वस्तु का सही स्वरूप जानना अशक्य है। 'स्याद्वाद सिद्धान्त' एक अभेद्य किला है जिसके भीतर वादी-प्रतिवादियों के मायामयी गोले प्रवेश नहीं कर सकते। इसी सिद्धान्त के आधार पर सप्तभंगों की प्ररूपणा की जाती है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. **स्यादस्ति**—प्रत्येक वस्तु अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा है।

२. **स्याद्नास्ति**—प्रत्येक वस्तु पर-द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा नहीं है।

३. **स्याद् अवक्तव्य**—प्रत्येक वस्तु अनन्तधर्मात्मक है, उसका सम्पूर्ण स्वरूप वचनातीत है। वस्तु का परिपूर्ण स्वरूप किसी भी शब्द के द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता अतः वस्तु अवक्तव्य है।

ये तीनों भंग ही शेष भंगों के आधार हैं।

४. **स्यादस्ति नास्ति**—यह भंग वस्तु का उभयमुखी कथन करता है कि वस्तु किस स्वरूप में है और किस रूप में नहीं है। प्रथम भंग वस्तु के केवल अस्तित्व का, द्वितीय भंग केवल नास्तित्व का कथन करता है और तीसरा भंग अवक्तव्य का कथन करता है परन्तु यह भंग अस्तित्व और नास्तित्व इन दोनों का विधान करता है।

५. **स्यादस्ति अवक्तव्य**—वस्तु अस्ति स्वरूप है तथापि समग्र रूप से अवक्तव्य है।

६. **स्याद् नास्ति अवक्तव्य**—पर-द्रव्य, क्षेत्र आदि की अपेक्षा वस्तु असत् होते हुए भी सम्पूर्ण रूप से उसका स्वरूप वचनातीत है।

७. **स्यादस्ति नास्ति अवक्तव्य**—अपने स्वरूप से सत् और पर-रूप से असत् होने पर भी वस्तु समग्र रूप से अवक्तव्य है।

उपर्युक्त भंगों को व्यावहारिक पद्धति से समझने के लिए एक उदाहरण दिया है—

हमने किसी व्यापारी से व्यापार सम्बन्धी वार्तालाप करते हुए पूछा कि आपके व्यापार का क्या हाल है ? इस प्रश्न का उत्तर उपर्युक्त सात विकल्पों के माध्यम से इस प्रकार दिया जा सकता है—

१. व्यापार ठीक चल रहा है। (स्यादस्ति)

२. व्यापार ठीक नहीं चल रहा है। (स्याद्नास्ति)

३. इस समय कुछ नहीं कह सकते, ठीक चल रहा है या नहीं। (स्याद् अवक्तव्य)

४. गत वर्ष से तो इस समय व्यापार अच्छा है, फिर भी हम भय से मुक्त नहीं हैं। (स्यादस्ति नास्ति)

५. यद्यपि व्यापार अभी ठीक-ठाक चल रहा है, परन्तु कह नहीं सकते आगे क्या होगा। (स्यादस्ति अवक्तव्य)

६. इस समय तो व्यापार की दशा ठीक नहीं है, फिर भी कह नहीं सकते आगे क्या होगा। (स्याद्नास्ति अवक्तव्य)

७. गत वर्ष की अपेक्षा तो कुछ ठीक है, पूर्णरूप से ठीक नहीं है तथापि कह नहीं सकते, आगे क्या होगा। (स्यादस्ति नास्ति अवक्तव्य)

जिस प्रकार अस्ति नास्ति अवक्तव्य के सात भंग कहे हैं वैसे ही नित्य, अनित्य, एक, अनेक आदि में भी घटित कर लेने चाहिए।

विश्व की विचारधाराएँ एकान्त के पंक में फँसी हैं। कोई वस्तु को एकान्तनित्य मानकर चलता है तो कोई एकान्तअनित्यता का समर्थन करता है। कोई इससे आगे बढ़कर वस्तु के नित्यानित्य स्वरूप को गड़बड़ समझकर अवक्तव्य कहता है, फिर भी ये सब अपने मन्तव्य की पूर्ण सत्यता पर बल देते हैं जिससे संघर्ष का जन्म होता है।

जैनदर्शन स्याद्वाद के रूप में तत्त्वज्ञान की यथार्थ दृष्टि प्रदान करके सत्य का दिग्दर्शन कराता है तथा दार्शनिक जगत् में समन्वय के लिए सुन्दर आधार तैयार करता है। स्याद्वाद और अनेकान्त में परस्पर वाच्यवाचक सम्बन्ध है। स्याद्वाद अनेक धर्मात्मक वस्तु का वाचक है और अनेक धर्मात्मक वस्तु वाच्य है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org